

ज्ञात्वा जनेन तत्सर्वं तयोः पापप्रचेष्टितम्। प्रोक्तं मंत्रिकुमाराणां ततस्तैर्नीतिवेदिभिः ॥१०॥
 भीमदासो विशिष्टात्मा राजपुत्रो महोत्सवैः। राज्ये संस्थापितो भक्त्या प्रजानां हितकारकः ॥११॥
 कापिल्यनगरात्सोपि भीमो दुष्टाशयो द्रुतम्। निर्घाटितः कुधीस्तेन सूपकारेण संयुतः ॥१२॥
 पापिनः स्वप्रजापुत्रमित्रमंत्र्यादयो जनाः। सर्वे स्युर्बान्धवाश्चापि शत्रवो नात्र संशयः ॥१३॥
 ततस्तेन च भीमेन कानने सूपकारकः। महाक्षुधातुरेणाशु भक्षितः पापकर्मणा ॥१४॥
 सोपि भीमः स्वपापेन मेखलाख्यपुरं गतः। मारितो वसुदेवेन संप्राप्तो नरकं ततः ॥१५॥

विगतधर्ममतिर्भवसागरे पतति कर्मकलंकवशीकृतः।

बुधजनाश्च ततो वरशर्मणे शुभकरं जिनधर्मं भजन्तु वै ॥१६॥

इति कथाकोशे रसनेन्द्रियलुब्धभीमराज्ञः कथा समाप्ता।

५१. नागदत्तायाः कथा

श्रीजिनं त्रिजगत्स्वामिसमर्चितपदद्वयम्। नत्वाहं नागदत्तायाश्चरित्रं रचयामि च ॥१॥
 आभीराख्यमहादेशे नासक्यनगरे वरे। वणिक्सागरदत्तोभून्नागदत्ता च तत्प्रिया ॥२॥

बालकों को प्रतिदिन इस प्रकार एकाएक गायब होने से शहर में बड़ी हलचल मच गई सब इसका पता लगाने की कोशिश में लगे। एक दिन इधर तो रसोइया को चुपके से एक गृहस्थ के बालक को उठाकर चला कि पीछे से उसे किसी ने देख लिया। रसोइया झट-पट पकड़ लिया गया। उससे जब पूछा गया तो उसने सब बातें सच्ची-सच्ची बतला दीं। यह बात मंत्रियों के पास पहुँची। उन्होंने सलाह कर भीमदास को अपना राजा बनाया और भीम को रसोइये के साथ शहर से निकाल बाहर किया। सच है, पापियों का कोई साथ नहीं देता। माता, पुत्र, भाई, बहिन, मित्र, मंत्री, प्रजा आदि सब ही विरुद्ध होकर उसके शत्रु बन जाते हैं ॥१०-१३॥

भीम यहाँ से चलकर अपने रसोइये के साथ एक जंगल में पहुँचा। यहाँ इसे बहुत ही भूख लगी। इसके पास खाने को कुछ नहीं था। तब यह अपने रसोइये को ही मारकर खा गया। यहाँ से घूमता-फिरता यह मेखलपुर पहुँचा और वहाँ वासुदेव के हाथ मारा जाकर नरक गया ॥१४-१५॥

अधर्मी पुरुष अपने ही पापकर्मों से संसार-समुद्र में रुलते हैं। इसलिए सुख की चाह करने वाले बुद्धिमानों को चाहिए कि वे सुख के स्थान जैनधर्म का पालन करें ॥१६॥

५१. नागदत्ता की कथा

देवों, विद्याधरों, चक्रवर्तियों और राजाओं, महाराजाओं द्वारा पूजा किए गए भगवान् के चरणों को नमस्कार कर नागदत्ता की कथा लिखी जाती है ॥१॥

आभीर देश नासक्य नगर में सागरदत्त नाम का एक सेठ रहता था। उसकी स्त्री का नाम नागदत्ता था। इसके एक लड़का और एक लड़की थी ॥२॥

श्रीकुमारस्तयोः पुत्रः श्रीषेणा तनुजाजनि। निजेन नन्दगोपेन नागदत्ता रताभवत् ॥३॥
 एकदा नागदत्ताया वाक्यतः सोपि गोपकः। व्याधिव्याजेन दुष्टात्मा संस्थितश्च गृहे तदा ॥४॥
 स्वयं सागरदत्तस्तु गृहीत्वा गोधनं तदा। गत्वा पश्चिमरात्रौ च सुप्तोऽव्यां सुनिश्चलः ॥५॥
 तत्र गत्वा स नन्देन मारितः पापकर्मणा। परस्त्रीलम्पटो जीवः किं करोति न निन्दितम् ॥६॥
 तदासौ नागदत्ता च नन्दको निन्दितो भुवि। दुराचारं प्रकुर्वन्तौ स्थितौ गेहे दुराशयौ ॥७॥
 श्रीकुमारस्तदा मातुः पापकर्मप्रपीडितः। नित्यं चित्ते करोत्येव महाकष्टं सुलज्जितः ॥८॥
 रुष्टया च तया नन्दः पापिन्या प्रेरितः पुनः। श्रीकुमारमपि त्वं रे मारयेत्यत्र गोपकः ॥९॥
 तथा नन्दः स्थितो गेहे रोगव्याजेन पापधीः। ततो गोधनमादाय गच्छन्स श्रीकुमारकः ॥१०॥
 भगिन्या भणितः शीघ्रं बान्धवः श्र्यादिषेणया। नागदत्ताज्ञया धीर यथा ते मारितः पिता ॥११॥

दोनों के नाम थे श्रीकुमार और श्रीषेणा। नागदत्ता का चाल-चलन अच्छा न था। अपनी गायों को चराने वाले नन्द नाम के ग्वाल के साथ उसकी आशनाई थी। नागदत्ता ने उसे एक दिन कुछ सिखा-सुझा दिया। सो वह बीमारी का बहाना बनाकर गायें चराने को नहीं आया। तब बेचारे सागरदत्त को स्वयं गायें चराने को जाना पड़ा। जंगल में गायों को चरते छोड़कर वह एक झाड़ू के नीचे सो गया। पीछे से नन्दग्वाल ने आकर उसे मार डाला। बात यह थी कि नागदत्ता ने ही अपने पति को मार डालने के लिए उसे उकसाया था और फिर परस्त्री-लम्पटी पुरुष अपने सुख में आने वाले विघ्न को नष्ट करने के लिए कौन बुरा काम नहीं करता ॥३-६॥

नागदत्ता और पापी नन्द इस प्रकार अनर्थ द्वारा अपने सिर पर एक बड़ा भारी पाप का बोझ लादकर अपनी नीच मनोवृत्तियों को प्रसन्न करने लगे। श्रीकुमार अपनी माता की इस नीचता से बेहद कष्ट पाने लगा। उसे लोगों को मुँह दिखाना तक कठिन हो गया। उसे बड़ी लज्जा आने लगी और इसके लिए उसने अपनी माता को बहुत कुछ कहा सुना भी। पर नागदत्ता के मन पर उसका कुछ असर नहीं हुआ। वह पिचली हुई नागिन की तरह उसी पर दाव खाने लगी। उसने नाराज होकर श्रीकुमार को भी मार डालने के लिए नन्द को उभारा। नन्द फिर बीमारी का बहाना बनाकर गायें चराने को नहीं आया। तब श्रीकुमार स्वयं ही जाने को तैयार हुआ। उसे जाता देखकर उसकी बहिन श्रीषेणा उसे रोककर कहा-भैया, तुम मत जाओ। मुझे माता का इसमें कुछ कपट दिखता है। उसने जैसे नन्द द्वारा अपने पिताजी को मरवा डाला है, वह तुम्हें भी मरवा डालने के लिए दाँत पीस रही है। मुझे जान पड़ता है नन्द इसीलिए बहाना बनाकर आज गायें चराने को नहीं आया। श्रीकुमार बोला-बहिन, तुमने मुझे आज सावधान कर दिया। यह बड़ा ही अच्छा किया। तू मत घबरा। मैं अपनी रक्षा अच्छी तरह कर सकूँगा। अब मुझे रंचमात्र भी डर नहीं रहा और मैं तुम्हारे कहने से नहीं जाता, पर इससे माता को अधिक सन्देह होता और वह फिर कोई दूसरा ही यत्न कर मुझे मरवाने का करती क्योंकि वह चुप तो कभी बैठी ही न रहेगी। आज बहुत ही अच्छा मौका हाथ लगा है। इसीलिए मरा

मार्यसे त्वमपि व्यक्तं नन्दकेनाद्य पापिना। कुरु त्वं यत्नमत्युच्चैस्तच्छ्रुत्वा श्रीकुमारवाक् ॥१२॥
 गत्वाटव्यां महाकाष्ठं वस्त्रेणाच्छाद्य वेगतः। धृत्वा वने स्वयं तत्र तिरो भूत्वा च संस्थितः ॥१३॥
 ततो नन्देन गत्वाशु हते खड्गेन दारुके। सेल्लेन श्रीकुमारेण हतो नन्दः सुपृष्ठतः ॥१४॥
 प्रभाते गृहमायातो गृहीत्वा गोधनं तदा। दोहनार्थं कुमारोसौ तथा पृष्ठः सुदुष्टया ॥१५॥
 त्वां गवेषयितुं पुत्र प्रेषितो नन्दको मया। कुत्र संतिष्ठते सोपि तच्छ्रुत्वा नन्दनोवदत् ॥१६॥
 अयं जानाति सेल्लो मे ततस्तं वीक्ष्य सेल्लकम्। रक्तलिप्तं सुपापिन्या दुष्टया नागदत्तया ॥१७॥
 आहत्य मुषलेनैव मारितः श्रीकुमारकः। श्रीषेणयातिकोपेन सा तदा दुष्टमानसा ॥१८॥
 मारिता मुषलेनाशु नागदत्ता सुपापिनी। मृत्वा च नरकं प्राप्ता पापी पापेन पच्यते ॥१९॥
 धिक्कामं सुदुराचारं येनासक्तो जनः कुधीः। महापापमुपाज्यैवं स्वयं यात्येव दुर्गतिम् ॥२०॥
 तस्माद्भवैर्जिनेन्द्रोक्तं शीलं शर्मशतप्रदम्। पालनीयं जगच्चेतो-रंजनं धर्महेतवे ॥२१॥

जाना ही उचित है। और जहाँ तक मेरा बस चलेगा मैं जड़मूल से उस अंकुर को उखाड़कर फेंक दूँगा, जो हमारी माता के अनर्थ का मूल कारण है। बहिन! तुम किसी तरह की चिन्ता मन में न लाओ। अनाथों का नाथ अपना भी मालिक है ॥७-१२॥

श्रीकुमार बहिन को समझा कर जंगल में गायेँ चराने को गया। उसने वहाँ एक बड़े लकड़े को वस्त्रों से ढककर इस तरह रख दिया कि वह दूसरों को सोया हुआ मनुष्य जान पड़ने लगा और आप एक ओर छिप गया श्रीषेणा की बात सच निकली। नन्द नंगी तलवार लिए दबे पाँव उस लकड़े के पास आया और तलवार उठाकर उसने उस पर दे मारी। इतने में श्रीकुमार ने आकर उसकी पीठ में इस जोर की एक भाले की जमाई कि भाला आर-पार हो गया और नन्द देखते-देखते तड़फड़ाकर मर गया। इधर श्रीकुमार गायों को लेकर घर लौट आया। आज गायेँ दोहने के लिए भी श्रीकुमार ही गया। उसे देखकर नागदत्ता ने उससे पूछा-क्यों कुमार, नन्द नहीं आया? मैंने तो तेरे ढूँढ़ने के लिए उसे जंगल में भेजा था। क्या तूने उसे देखा है कि वह कहाँ पर है? श्रीकुमार से तब न रहा गया और गुस्से में आकर उसने कह डाला-माता, मुझे तो मालूम नहीं कि नन्द कहाँ है। पर मेरा यह भाला अवश्य जानता है। नागदत्ता की आँखें जैसे ही उस खून से भरे भाले पर पड़ी तो उसकी छाती धड़क उठी। उसने समझ लिया कि इसने उसे मार डाला है। अब तो क्रोध से वह भर गई उसे सामने एक मूसला रखा था। उस पापिनी ने उसे ही उठाकर श्रीकुमार के सिर पर इस प्रकार जोर से मारा कि सिर फटकर तत्काल वह भी धराशायी हो गया। अपने भाई की इस प्रकार हत्या हुई देखकर श्रीषेणा दौड़ी और नागदत्ता के हाथ से झट से मूसला छुड़ाकर उसने उसके सिर पर एक जोर की मार जमाई, जिससे वह भी अपने किए की योग्य सजा पा गई। नागदत्ता मरकर पाप के फल से नरक गई। सच है-पापी को अपना जीवन पाप में ही बिताना पड़ता है। नागदत्ता इसका उदाहरण है। उस दुराचार को धिक्कार, उस काम को धिक्कार, जिसके वश मनुष्य महा पापकर्म कर और फिर उसके

शीलं श्रीजिनभाषितं शुचितरं देवेन्द्रवृन्दैः स्तुतं शीलं दुःखकलंकपंकसलिलं शीलं जगन्मोहनम् ।
ये भव्याः प्रतिपालयन्ति नितरां नित्यं सुशर्मप्रदं भुक्त्वा ते त्रिदशादिसौख्यमतुलं शुद्धं लभन्ते सुखम् ॥२२॥
इति कथाकोशे नागदत्तायाः कथा समाप्ता ।

५२. द्वीपायनमुनेः कथा ।

प्रणम्य त्रिजगत्पूज्यं श्रीजिनं शर्मकोटिदम् । द्वीपायनस्य संवक्ष्ये चरित्रं मुनिभाषितम् ॥१॥
पुरी द्वारवती ख्याता देशे सौराष्ट्रसंज्ञके । श्रीमन्नेमिजिनेन्द्रस्य जन्ममायापवित्रिता ॥२॥
तत्र श्रीबलभद्राख्यवासुदेवौ नरेश्वरौ । महाराज्यं प्रकुर्वन्तौ नवमौ हलिकेशवौ ॥३॥
एकदा तौ जगत्पूज्यं श्रीमन्नेमिजिनाधिपम् । ऊर्जयन्तगिरौ नत्वा समवादिसृतौ स्थितम् ॥४॥
अष्टधा सुमहाद्रव्यैः समभ्यर्च्य सुभक्तितः । स्तुत्वा सद्धर्ममाकर्ण्य हृष्टो ज्येष्ठो जगाद च ॥५॥
जगद्धन्धो जिनाधीश केवलज्ञानलोचन । ब्रूहि भो त्रिजगन्नाथ प्रोल्लसत्करुणार्णव ॥६॥
ईदृशी वासुदेवस्य सम्पदा शर्मदायिनी । भविष्यति कियत्कालं लोकालोकप्रकाशक ॥७॥
तदा प्राह जिनाधीशो वासुदेवस्य सम्पदा । स्थित्वा द्वादशवर्षेषु ततो नाशं प्रयास्यति ॥८॥

फल से दुर्गति में जाता है। इसलिए सत्पुरुषों को उचित है कि वे जिनेन्द्र भगवान् के उपदेश किए, सबको प्रसन्न करने वाले और सुख-प्राप्ति के साधन ब्रह्मचर्य व्रत का सदा पालन करें ॥१३-२२॥

५२. द्वीपायन मुनि की कथा

संसार के स्वामी और अनन्त सुखों के देने वाले श्रीजिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर द्वीपायन मुनि का चरित लिखा जाता है, जैसा पूर्वाचार्यों ने उसे लिखा है ॥१॥

सोरठदेश में द्वारका प्रसिद्ध नगरी है। नेमिनाथ भगवान् का जन्म यहीं हुआ है। इससे यह बड़ी पवित्र समझी जाती है। जिस समय की यह कथा लिखी जाती है। उस समय द्वारका का राज्य नवमें बलभद्र और वासुदेव करते थे। एक दिन ये दोनों राज-राजेश्वर गिरनार पर्वत पर नेमिनाथ भगवान् की पूजा-वन्दना करने को गए। भगवान् की इन्होंने भक्तिपूर्वक पूजा की और उनका उपदेश सुना। उपदेश सुनकर इन्हें बहुत प्रसन्नता हुई इसके बाद बलभद्र ने भगवान् से पूछा-हे संसार के अकारण बन्धो, हे केवलज्ञानरूपी नेत्र के धारक, हे तीन जगत् के स्वामी! हे करुणा के समुद्र! और हे लोकालोक के प्रकाशक, कृपाकर कहिए कि वासुदेव को पुण्य से जो सम्पत्ति प्राप्त है वह कितने समय तक ठहरेगी? भगवान् बोले-बारह वर्ष पर्यन्त वासुदेव के पास रहकर फिर नष्ट हो जायेगी। इसके सिवा मद्य-पान से यदुवंश का समूल नाश होगा, द्वारका द्वीपायन मुनि के सम्बन्ध से जलकर खाक हो जायेगी, और बलभद्र, तुम्हारी इस छुरी द्वारा जरत्कुमार के हाथों से श्रीकृष्ण की मृत्यु होगी। भगवान् के द्वारा यदुवंश द्वारका और वासुदेव का भविष्य सुनकर बलभद्र द्वारका आए। उस समय द्वारका में जितनी शराब थी, उसे उन्होंने गिरनार पर्वत के जंगल में डलवा दिया। उधर द्वीपायन अपने